RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-03
Issue-08
August-2018

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

नागार्जुन की काव्य चेतना

Dr.Neetu Sharma

Associate professor, Department of hindi, I.T College ,Lucknow (India)

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 07 August 2018

Keywords
जनकाव्य, अन्तः प्रवृत्ति, जनजीवन प्रगतिशीलता

ABSTRACT

'जनकाव्य' या जनवादी काव्य के कई प्रयोग पिछले दशकों में देखे गए हैं। इसकी एक धारा मार्क्स या माओ की ओर है और दूसरी सर्वोदय–अन्त्योदय की ओर। इन अन्तर्विरोधों में बिना पड़े हुए साँस–साँस में ''जन की व्यथा–कथा कहते रहने का जैसा स्तुत्य प्रयास नागार्जुन में दिखता है, वैसा अन्यत्र नहीं। नागार्जुन मन–वचन–कर्म से जनवादी थे।'' जनवाद उनका बौद्धिक व्यसन (मात्र बहस का मुद्दा) नहीं था, बल्कि भोगा हुआ जीवन दर्शन था। यह उन्हें अपने प्रकृति परिवेश से और अपनी पैतृक परम्परा से प्राप्त हुआ था। गरीबी की मार से आहत वे न जाने कैसी–कैसी परिस्थितियों से टकराते रहे हैं। अव्यवस्थित और तारतम्यविहीन शिक्षा, जीविकोपार्जन के भाँति–भाँति के प्रयोग, पिता से मिली उपेक्षा स्वामी सहजानन्द से मिली प्रेरणा और अन्तःप्रवृत्ति से प्राप्त यायावरी के कारण नागार्जुन जी का जो बहुआयामी व्यक्तित्व निर्मित हुआ, वह हिन्दी की जातीय संस्कृति की उपज थी, न कि दलीय मतवाद की। उनकी प्रतिभा प्रकृति प्रदत्त थी कवि स्वयं कहता है–

''मुझको भी मिली है प्रतिभा की प्रसादी, आटा, दाल, नमक, लकड़ी की जुगाड़ में...। अब कलम ही मेरा हल है, कुदाल है''

प्रस्तावना–

निस्संदेह नागार्जुन का साहित्य जन–साहित्य का नायाब नमूना है। यह साहित्य दर्शन उन्हें सहभोक्त रूप में जनजीवन के सूक्ष्म पर्यवेक्षण से प्राप्त हुआ था। वे मध्य निम्न वर्ग के व्यक्ति थे। सही अर्थों में जनता के और धरती के कवि। मिथिला के गाँवों की जीवन–विभीषिका को उन्होंने स्वयं भोगा था। हिन्दी के महानगर निवासी आंचलिक उपन्यासकार जिस तरह किसी अंचल विशेष को तमाशखोर की कौतुकी दृष्टि से देखते हैं और कागजी मैदान पर साहित्यिक 'पिकनिक' मनाते हैं, नागर्जुन की दृष्टि उससे भिन्न थी। उन्होंने 'बलचनमा' की जिन्दगी को स्वयं जिया था। ''बाबा बटेश्वरनाथ'', 'वरूण के बेटे', हीरक जयन्ती, नयी पौध, रतिनाथ की चाची' आदि में वर्णित जीवन कथा खण्डशः उनकी अपनी ही है। गरीबी की अनुभूति उन्होंने उधार नहीं ली थी। अकाल, भुखमरी और भ्रष्टाचार उनके देशकाल का सत्य था, जिसे उन्होंने बड़ी निर्ममता, निर्भीकता के साथ बेलौस ढंग से उभारा है। इसलिए 'अकाल और उसके बाद' तथा 'प्रेत का बयान' नामक कविताएँ इतनी प्रभावी हो सकीं। इसी कारण 'हरिजन गाथा' में पूरी संवेदना सहित उनका यह दर्द मुखरित हुआ है। ''अन्न पचीसी'' में उन्होंने इसीलिए खाली प्लेट की यह अलख जगाई है। नागार्जुन आजीवन इस वर्ग से प्रतिबद्ध रहे हैं। पहले प्रगतिशील होकर वे इस वर्ग से जुड़े, किन्तु उनकी सतत प्रगतिशीलता को दलीय आदेश कभी दबा नहीं पाया। सन् 1962 में उन्होंने पार्टी के प्रतिबंधों को तोड़कर चीनी हमले की भर्त्सना की, क्योंकि 'पार्टीजन' से ज्यादा वे एक भारतीय थे। फलतः वे दल से निष्कासित कर दिये गये। किन्तु फिर भी उनकी जनवादिता और क्रान्तिकारिता शिथिल नहीं हुई। वह निरन्तर सुगबुगाती रही। अपने प्रबल और प्रखर विद्रोही व्यक्तित्व के कारण नागार्जुन कभी किसी के अन्ध समर्थक नहीं बने। वे पहले कभी इंदिरा गांधी से भी प्रभावित थे, पर गांधी की हत्या पर उन्होंने कसम खाते हुए लिखा–''हृदय नही परिवर्तित होगा, क्रूर कुटिल मति चाणक्यों का।''

वे कहते हैं कि शान्ति न 'रामधुन' से आती है, न गीता से। शान्ति प्रकट होती है भरे पेट से। 'शासन की बन्दूक' नामक प्रसिद्ध कविता में वे कहते हैं– ''सत्य स्वयं घायल हुआ, गयी अहिंसा चूक''। वे बापू के तीनों बंदरों को नये संदर्भ में परिभाषित करते हैं। जिस व्यवस्था में बेरोजगारी और भूखमरी से भारत भाग्यविधाता घुट–घुटकर मर रहा हो, वहाँ राष्ट्रीय पर्व मनाने और राष्ट्रगान गाने से क्या होगा? नागार्जुन ने व्यंग्य किया– '' प्रेसीडेंट के डाँस डिनर में खूब नाच लो झूम लो। उनके अनुसार यह भारी विडम्बना है– दस हजार, दस लाख मरें पर झण्डा ऊँचा रहे हमारा। ''उन्होंने प्रशासन पर प्रहार करते हुए कहा–''तीन रात में तेरह जगहों पर पड़ता है। डाका। यह भी भारी चमत्कार है कांग्रेस महिमा का।''

वर्तमान राजनीतिक अव्यवस्था के विरूद्ध अधिसंख्य बुद्धिजीवी मात्र भुनभुनाते हैं और सत्ता–सुख पाकर छद्म आचरण करने लगते हैं, किन्तु बाबा नागार्जुन कलम की बन्दूक लिये हुए निरन्तर सत्ता पर प्रहार (वार पर वार) करते दिखते हैं। आपातकाल के बीच उन्होंने अनेक राजनीतिक कविताएँ लिखीं। उनका अक्खड़ स्वभाव पंक्ति–पंक्ति में फूट पड़ा है। डिक्टेटरशिप से लोकतंत्र को बचाने के लिए उन्होंने कविता को 'अजान' के रूप में ढाला। अपने सौन्दर्यबोध को त्यागकर उसे नारेबाजी का रूप दिया और आतंकित जनता के बीच जोशीली कविताएँ पढ़कर उसे ओजोदीप्त किया, अर्थात् कविता को जनयुद्ध का आयुध बना दिया। 'खिचड़ी विप्लव देखा हमने', 'प्यासी पथरायी आँखें, तालाब की मछलियाँ,

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

'हजार–हजार बाहों वाली,' 'तुमने कहा था', 'पुरानी जूतियों का कोरस' आदि संकलनों में इस प्रकार की कविताएँ भरी पड़ी हैं। उनकी कई कविताओं का लक्ष्य रही हैं– पूर्व प्रधानमंत्री। ''तुम रह जाते दस साल और'', '' इन्दुजी, इन्दुजी क्या हुआ आपको'', ''पता नहीं दिल्ली की देवी गोरी है या काली'' आदि इसी प्रकार की कविताएँ हैं। आजादी के बाद से वे दलीय राजनीति और सत्ताधारियों की कार्यपद्धति में अनवरत असहमति प्रकट करते दिखते हैं। इंग्लैण्ड की रानी के आगमन पर नेहरू जी ने उनके स्वागत की जो योजना बनाई थी, उस पर व्यंग्य करते हुए नागार्जुन ने लिखा था– आओ रानी हम ढोयेंगे पालकी। यही हुई है राय जवाहर लाल की।'' पेशेवर नेताओं तथा नौकरशाहों को कहीं उन्होंने प्रतीक रूप में लिखा है, जैसे 'अजायबघर' कविता में और कहीं प्रकट रूप उन पर लिख मारा है। यों उनके भिन्न–भिन्न प्रतीक भी बहुत स्पष्ट हैं, जैसे–'बाघिन' कविता में सत्ता को वे कहीं 'पैने दाँतों वाली' कहते हैं, कहीं ''मोटी तगड़ी अधेड़ मादा सुअर'' (मादरे हिन्दी की बेटी, जो छौनों को पिला रही है दूध) और कहीं उसे वे बूढ़ी ''कंगारू की उपमा देते हैं। जब नागार्जुन के तनमन में तलखी भर जाती है, तब वे बहुत कटु हो जाते हैं। लोकशील तक भूल जाते हैं और कविता का कुठार लेकर पूरे ब्रह्मतेज से आक्रमण कर बैठते हैं। 'मंत्र' कविता इसका उदाहरण है, जिसमें व्यंग्य भी है और गहरी जुगुप्सा भी, जैसे– ''अष्ट धातुओं की ईंटों के भट्ठे। महामहिम, महामहो, उल्लू के पट्ठे। इसी पेट के अन्दर समा जाये सर्वहारा।''

सुरूचि संस्कार सम्पन्न साहित्यिकों को गालियाँ नहीं भायेंगी, किन्तु क्रोधोन्मत कवि के समक्ष और कोई विकल्प नहीं है। इस पाप लीला को जो निस्संग भाव से देखे, वह नराधम है। नागार्जुन ने स्वयं स्वीकार किया है–''प्रतिहिंसा ही स्थायी भाव है मेरे कवि का।'' वस्तुतः जो कवि जनवजीवन के साथ संबद्ध हो जाता है, वह भ्रष्ट व्यवस्था से प्रतिक्रिया प्रेरित होकर उसी की भाषा में उसका भण्डाफोड़ करने लगता है। इसीलिए नागार्जुन ने लिखा–

''झूठ–मूठ सुजला–सुफला के गीत न अब हम गायेंगे। भात–दल,
तरकारी जब तक नहीं पेट भर पायेंगे।।''

इसके लिए वे क्रांति का आहवान् करते हैं। वे कई बार जेल यात्राएँ करते रहे हैं और विभिन्न प्रकार की यातनाएँ झेलते रहे हैं। कारावास में रहते हुए भी उनकी अल्हड़ता कम नहीं हुई। इसका उदाहरण है उनकी कविता–''रजनीगंधा''। जेल की कोठरी के पास खिली रातरानी को संबोधित करते हुए वे कहते हैं–''तुम खिलो रात की रानी! हो म्लान भले यह जीवन और जवानी। प्रहरी परिवेष्ठित इस बंदीशाला में। मै सडूँ परन्तु ताजी रहे कहानी।'' यह कविता माखनलाल चतुर्वेदी की 'कैदी और कोकिला' की याद दिला देती है। नागार्जुन को यह भी भली–भाँति विदित है कि जनसमाज बड़े–बड़ों को भुला देता है। उनकी भी उपेक्षा हो सकती है, किन्तु इससे उनका उत्सर्ग भाव कम नहीं होता। ''उनको प्रणाम'' कविता में वे लिखते हैं–

''कृतकृत्य नहीं जो हो पाये, प्रत्युत फाँसी पर गये झूल, कुछ ही
दिन बीते हैं फिर भी यह दुनियाँ जिनको गयी भूल, उनको प्रणाम।''

आज की राजनीतिक रचनाएँ जिन कवियों ने की हैं, उनमें विप्लवगान है, हुँकार है, यानी आवेग है, किन्तु नागार्जुन जैसा दिग् कालबोध और बेबाकपन उनमें नहीं मिलता। उन्होंने कविता हीनता अथवा असाहित्यिकता के अस्तित्व संकट के अंतिम बिन्दु तक जाकर अपनी कविताओं में राजनीतिक विडम्बना की मीमांसा की है।'' 'प्रजातंत्र का ढोंग' आदि रचनाएं इस कथन का उदाहरण हैं। कवि ने जनता को सबसे बड़ी शक्ति माना है। उसका विश्वास है कि ''जनता ने हिटलर मुसोलिनी तक को मारी लात'' फिर इन नेताओं की क्या औकात? आवश्यकता है कि जनक्रान्ति को जाग्रत किया जाये। वे यही चाहते रहे हैं कि कविता का पोस्टर कविता बनाया जाये। ''रात में पोस्टर'' नामक एक कविता में वे ऐसी ही बुद्धिजीवी कवि पीढ़ी की प्रतीक्षा कर रहे हैं, जो शब्दों को बुलेट की तरह इस्तेमाल करे और जनद्रोहियों का सर्वनाश कर दे।

जनकवि रूप में नागार्जुन ने जनमनोविज्ञान का सूक्ष्म अंतर्दर्शन करते हुए बारीक विश्लेषण किया है। सफेदपोश मध्यवर्ग में आज जो कुलीनतंत्र तथा वर्ग वैषम्य की जनविरोधी कुप्रवृत्ति भर गयी है, इससे पारम्परिक अलगाव दिनों दिन बढ़ता जा रहा है। हम फैशन के तौर पर गरीब, खेतिहर एवं मजदूर की तो बात करते हैं, लेकिन किसी मैले–कुचैले अधनंगे, भिखमंगे को झेल नहीं पाते। नागार्जुन इस प्रवृत्ति को ताड़ लेते हैं और पूछते हैं–

''उसके पास बैठ जाने से घिन तो नहीं आती? पसीने की बदबू से जी तो नहीं कुढ़ता।''अपनी एक कविता में उन्होने एक ऐसी आधुनिका का चित्रण किया है, जो मतदान केन्द्र से इसलिए लौट जाती है कि वहाँ उँगलियों पर स्याही लगाई जा रही थी, जिससे 'नेलपॉलिश' के खराब हो जाने का भय था। नागार्जुन उस पर व्यंग्य करते हुए लिखते हैं–

''जयती नखरंजनी।'' जन जीवन से लगाव उनकी मैथिली कविताओं में और गहरे उतर गया है। इसी जन चेतना से प्रेरित होकर जनकवि गोर्की, लेनिन, गांधी, भारतेन्दु जैसी विभूतियों की उन्होंने वंदना की है। केदारनाथ अग्रवाल को संबोधित करते हुए उन्होंने लिखा था– ''ओ जन–मन के सजग चितेरे'' निराला को उन्होंने ''औढ़र, औघड़ बमबोला'' कहा। किंतु दूसरी ओर उन्होंने आइजनहावर पर ''काल मौत निछावर'' की। लोकनायक के प्रति उन्होंने दोहरा मनोभाव व्यक्त किया। एक भाव ''जय प्रकाश पर पड़ी लाठियाँ लोकतंत्र की'' में व्यक्त हुआ है तो दूसरा भाव ''खिचड़ी विप्लव'' में। इसके पीछे कोई अवसरवादी दुविधा नहीं, बल्कि संवेदनशील कवि–मन की मुक्त प्रतिक्रिया रही है।

नागार्जुन की कविता का दूसरा पक्ष है–प्रेम और सौन्दर्य। मुख्यतः जन प्रेम और जन सौन्दर्य। अपनी धरती के सौन्दर्य के प्रति उनका गहरा लगाव रहा है। उन्हें मिथिला के वे धानखेत, वे तालमखाने बहुत–बहुत याद आते रहे हैं। अपने फक्कड़पन और घुमक्कड़ जीवन के कारण वे अपने अंचल से दूर रहने के लिए अभिशप्त थे। इसलिए जब ये अपने गाँव लौटते थे तो उस अनुभूति को कविता में टाँक देते थे। उनकी कविता ''बहुत दिनों के बाद अबकी मैने तलकर ताल मखाना खाया'' इसका उत्कृष्ट उदाहरण है। जन कवि होने के नाते अपने प्रकृति परिवेश पर यथा ग्राम्य

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

संस्कृति पर वे मुग्ध थे। इसलिए उसके एक–एक दृश्य को कविता में उतारने की कोशिश नागार्जुन ने की है। उदाहरणार्थ द्रष्टव्य हैं ''यात्री' की मैथिली कविताएँ। उनकी खड़ी बोली कविताओं में जीवन प्रकृति–चित्रण हुआ है। प्रमाण स्वरूप द्रष्टव्य है–यहाँ किरणों में ये नहा रहे हैं। यही प्रकृति ''अमल धवल गिरि के शिखरों पर बादल को घिरते देखा है'' कविता में अंकित हुई हैं। हिमालय की परिक्रमा तो हर भारतीय कवि ने की है, जबकि इनकी अधिकांश कविताएँ जनांचल से जुड़ी हुई हैं। जैसे–''अबके इस मौसम में कोयल बोली है पहली बार।'' ''सिंधु नदी झुक आये कजरारे मेघ'' आदि।इसी भाव की देन है उक्त उद्‌गार। एक कविता में वे यहाँ तक कहते हैं कि ये प्राकृतिक दृश्य उन्हें आत्मविस्मृत कर देते हैं। ''इन दृश्यों के बीच बैठ जब कालिदास के पद गाता हूँ। तब मैं तुम्हें भूल जाता हूँ।''नागार्जुन ने सहज भाव से अपने रागबोध को भर दिया है। उनका दाम्पत्य भाव ''सिन्दूर तिलकित भाल'' कविता में प्रगल्भतापूर्वक प्रकट हुआ है और वात्सल्य भाव ''वह दंतुरित मुस्कान'' में व्यक्त हुआ है। उनके अनुसार व्यक्तिगत जीवन का यह राग–विराग ही कविता में छलक–छलक पड़ता है। ''कालिदास सच–सच बतलाना'' कविता में वे पूछते हैं–''इन्दुमती के मृत्युशोक से अज रोया या तुम रोये थे?''

निष्कर्ष–

वस्तुतः अपनी प्रौढ़ा ग्रामीण सहधर्मिणी के श्री–सौभाग्य और अपनी पुत्री की सहज स्मिति पर रीझ–खीझ उठना एवं मध्य–निम्नवर्गीय जनकवि का सहज संस्कार है। नागार्जुन का पूरा साहित्य इसी जनचेतना से अनुस्यूत है। उन्हें व्यक्तिगत जीवन में भी आभिजात्य और वैभविलास कभी रास नहीं आया। वे सामंतवादी, साम्राज्यवादी, पूँजीवादी, विदेशी उपभोक्तावादी, जड़ सभ्यता से निरन्तर जूझते रहे हैं। इन पर आक्रोश और विक्षोभपूर्ण व्यंग्य करते हुए रचनाओं से सर्वहारा को सहलाते रहे हैं। उनका साहित्य सामयिक है, सोउद्‌देश्य है और वह बुद्धिजीवी वर्ग की असली आवाज (जनक्रांति की आवाज) है, जो सर्वसामान्य को संबोधित है। यही जन साहित्य और जनक्रांति की सही संहिता है।

संदर्भ–

1. नागार्जुन का रचना संसार विजय बहादुर सिंह – वाणी प्रकाशन–नई दिल्ली
2. नागार्जुन की कविता – अजय तिवारी– वाणी प्रकाशन– नई दिल्ली
3. नई कविता– डॉ0 देवराज– वाणी प्रकाशन– नई दिल्ली।
4. नागार्जुन : प्रतिनिधि कविताएं – सम्पादक– नामवर सिंह– पृ0 104
5. हिन्दी नवगीत का रचना विधान– डॉ0 अवधेश रारायण मिश्र– आर्य भाषा संस्थान पृ0 19
6. आधुनिक– अत्याधुनिक हिन्दी कवि– प्रो0 सूर्य प्रसाद दीक्षित–भारत प्रकाशन लखनऊ

© RRIJM 2015, All Rights Reserved